Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor: 4.081
Volume-12, Issue-3, December-2018 www.researchguru.net

ब्रिटिशकालीन भारत में रेलवे के विकास पर कार्ल मार्क्स के विचार

अखिल कुमार गुप्ता

'शोधार्थी, इतिहास विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म. प्र.)

सारांश– विश्व इतिहास में ऐसे बहुत ही कम विद्वान मिलेंगे जिन्होंने सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित किया। कुछ ने इतिहास बदला और कुछ के कारण इतिहास ही बदल गया। कार्ल मार्क्स एक ऐसे ही असाधारण व्यक्ति थे जिनसे इतिहास को देखने, समझने तथा लेखन की धारा बदल गई। उन्होंने तत्कालीन समय में ज्ञान को एक नया आयाम दिया तथा समाज की वर्ग आधारित संरचना को अर्थ से देखने का नया नजरिया विकसित किया। इसलिए आज हम उनके विचारों से प्रेरित होकर इतिहास लेखन का कार्य मार्क्सवादी दृष्टिकोण से करते है। उनके लेखन का दायरा सिर्फ यूरोपीय और अमेरिकी समाज तक ही सीमित न था बल्कि उन्होंने भारत के बारे में भी लिखा। 1853 में वह अमेरिका के ट्रिब्यून नामक अखबार के लंदन के संवाददाता बनाए गए। उनके संवाददाता बनने का वर्ष भारतीय इतिहास का एक बहुत प्रसिद्ध वर्ष रहा है, इसी वर्ष भारत में पहली रेल चलाई गई। अब यह तो निश्चित ही था कि उन्होंने इस वर्ष में होने वाली विविध घटनाओं के बारे में कुछ न कुछ जरूर लिखा होगा। भारतीय रेलवे के साथ–साथ 1857 की घटना, अंग्रेजों की नीतियाँ तथा भारत में अंग्रेजी राज के भविष्य के बारे में उन्होंने अखबार के माध्यम से अपने विचार प्रकट किए।

कुंजी शब्द– वर्ग संरचना, भारतीय रेलवे, पूँजीवाद, श्रम, यातायात के साधन

मार्क्स ने विश्व में बढ़ते पूँजीवाद और साम्राज्यवाद के बारे में लिखा और बतलाया कि किस प्रकार एक शोषणभरी प्रक्रिया के तहत श्रम का दोहन किया जा रहा है। पूँजीवाद के उदय के बारे में मार्क्स का विचार है कि इस व्यवस्था का उदय 16 वीं शताब्दी के आस–पास हुआ होगा। इससे पूर्व संसार में गिल्ड प्रथा का चलन था जिसमें प्रत्येक श्रमिक स्वतंत्र था। प्रत्येक के पास अपने काम के औजार और यंत्र थे और प्रत्येक व्यक्ति स्वेच्छा से अपना कार्य करता था। अपना कार्य करते हुए उत्पादन में जो बचत होती थी, उस बचत का स्वामी स्वयं श्रमिक ही था। समय के परिवर्तन के साथ यातायात के साधनों का विकास हुआ, समुद्री यात्राओं की खोज की जाने लगी। नये–नये उपकरणों का आविष्कार किया जाने लगा और इसी के साथ व्यापार–वाणिज्य का विकास होने लगा विकास के इस क्रम में व्यापार के तौर–तरीके बदलने लगे।[1] धीरे–धीरे बैंको व अन्य संस्थाओं ने मिलकर व्यापार को अपने हाथ में ले लिया। बदलते व्यापारिक स्वरूप ने पूँजी को कुछ विशेष वर्ग तक ही सीमित कर दिया तथा यह वर्ग उद्योगों का संचालन करने लगा। अब इस नई व्यवस्था ने शिल्पियों का कार्य–क्षेत्र पूर्णतः बदलने लगा। शिल्पियों द्वारा अपना व्यापार अब इनके हाथों में आ गया और धीरे–धीरे शिल्पी पूँजीपतियों के श्रमिक के रूप में कार्य करने लगे। इस प्रकार समाज में दो वर्ग बन गए पूँजीपति एवं श्रमिक।

समय परिवर्तन के साथ–साथ श्रमिक वर्ग में भी परिवर्तन आया और वे अपने श्रम में शोषण की एक प्रक्रियाबद्ध योजना भी देखने लगे। मजदूरों में यह चेतना पहले भी थी लेकिन उसके आयाम वर्ग चेतना के रूप में नहीं देखने को मिलते। मार्क्स ने कहा, वर्ग में वर्ग चेतना

स्वतः नहीं आती है, यह विषयनिष्ठ रूप से विकसित होती है। इस संबंध में हंगरी के मार्क्सवादी विद्वान जिन्हें युवा मार्क्स कहा जाता है उस पर ग्यार्ग लूकाज ने इतिहास एवं वर्ग चेतना नामक पुस्तक में विस्तृत चर्चा की। लूकाज ने लिखा कि पूँजीवाद से पहले जो वर्ग विभाजित समाज थे उनके वर्गों में बहुत स्पष्ट वर्ग चेतना नहीं थी। पूँजीवाद में मजदूरों में वर्ग चेतना सही सही रूप से पैदा होती है। बहुधा यह वर्ग चेतना उनमें स्वतः पैदा नहीं होती है बल्कि प्रगतिशील बुद्धिजीवियों के द्वारा बाहर से लाई जाती है परन्तु मजदूर वर्ग ही वस्तुनिष्ठ रूप से उस अवस्था में होता है कि वह वास्तविक वर्ग चेतना विकसित कर सके।[2] इसी विकसित चेतना ने धीरे–धीरे साम्यवाद का रूप ले लिया। मार्क्सवाद व्यक्तिगत संपत्ति के उस अधिकार को चुनौती देता है जो शोषण से आरम्भ हो। संपत्ति के अधिकार समाज में सबके लिए समान होना चाहिए जिससे सम्पूर्ण समाज का विकास हो। मार्क्स की श्रमिक परिकल्पना का मूल्य अनिवार्य रूप से संपत्ति के अधिकारों के सिद्धान्त को अस्तव्यस्त करता है। आरम्भिक उन्नीसवीं शताब्दी में समाजवाद संपत्ति के विभाजन का एक आलोचक रहा है।[3] मार्क्सवाद समाज में पूँजी के वर्चस्व को चुनौती देने के साथ संपत्ति का केद्रीकरण नहीं चाहता। वास्तविकता में श्रम शक्ति के आधार पर ही संपत्ति का बटवारा होना चाहिए।

मार्क्स ने भारत में रेलवे, अंग्रेजों के द्वारा होने वाले शोषण, मजदूरों की दशा, अंग्रेजी प्रशासन तथा ईस्ट इंडिया कंपनी की कार्यप्रणाली के बारे में लिखा। भारत की राजनीतिक एकता, जो महान मुगलों के जमाने में कभी भी इतनी दृढ़ या विस्तृत न थी, भारत के पुनरूद्धार की पहली शर्त थी। इस एकता को, जिसे अंग्रेजों ने अपनी तलवार के जोर से कायम किया, अब बिजली का तार और भी अधिक दृढ़ करेगा तथा स्थायित्व प्रदान करेगा। अंग्रेज ड्रिल–सार्जेंट द्वारा संगठित तथा प्रषिक्षित भारतीय सेना भारत के अपने प्रयत्नों से मुक्ति प्राप्त करने और फिर कभी किसी हमलावर का षिकार न बनने की अनिवार्य शर्त थी। भारतीय समाज के पुनर्निर्माण का एक नया और सषक्त साधन आजाद अखबार है, जिनसे एषियाई समाज पहली बार परिचित हो पाया है और जिनका संचालन मुख्यतया भारतीयों और युरोपियनों के समान वंषज कर रहे हैं। जमींदारी और रैयतवारी की पद्धतियां, अपने मे घृणित होते हुए भी, निजी भू–स्वामित्व के दो भिन्न–भिन्न रूप है, और एषियाई समाज मे इसी निजी भू–स्वामित्व की कमी है। उन भारतीयों में से, जिन्हें कलकत्ते में अंग्रेजों के निरीक्षण में अनिच्छापूर्वक और कम से कम संख्या में षिक्षा दी जा रही है, एक नया वर्ग सामने आ रहा है, जो शासन–योग्यता रखता है और यूरोप के विज्ञान से प्रभावित है। भाप द्वारा भारत तथा यूरोप के बीच नियमित और द्रुत यातायात होने लगा है, भारत के मुख्य बन्दरगाहों का दक्षिण और पूर्व के सागरों के तमाम बन्दरगाहों के साथ सम्बन्ध स्थापित हो गया है और इस तरह भारत की पृथकता, जो उसकी गतिहीनता का मुख्य कारण थी, खत्म हो गई है। वह दिन दूर नहीं, जब रेलों और भाप से चलने वाले जहाजों के सम्मिलित साधन से इंगलैंड और भारत के बीच की दूरी समय के लिहाज से कम होकर आठ दिन की रह जायेगी और जब यह देष, जो कभी पुराण–कथाओं का विचित्र देष सा लगता था, सचमुच पष्चिमी संसार से जा मिलेगा।

भारत की उन्नति में ग्रेट ब्रिटेन के शासक वर्गों की दिलचस्पी अभी तक केवल सांयोगिक, क्षणजीवी तथा अपवाद स्वरूप रही है। अभिजात वर्ग भारत को जीतना चाहता था, थैलीषाह उसे लूटना चाहते थे और उद्योगपति अपने सस्ते माल से उसके बाजारों को पाट देना चाहते थे। पर अब स्थिति एकदम उलट गयी है। उद्योगपतियों को अब पता चल गया है कि भारत को उत्पादक देष में परिवर्तित करना उनके लिए अत्यावष्यक है और इसके लिए सबसे जरूरी यह है कि देष में सिंचाई तथा यातायात के साधनों की व्यवस्था की जाये। अब उनका इरादा भारत भर में रेलों का जाल बिछा देने का है। वे ऐसा करेंगे भी, जिसके परिणाम अवष्य

ही बहुमूल्य होंगे। यह ज्ञात है कि भारत की उत्पादक शक्तियां इसलिए नितान्त अवरूद्ध है कि उसकी विभिन्न उपजों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने और उसकी अदला–बदली करने के लिए यातायात–साधनों का पूर्ण रूप से अभाव है। विनिमय के साधनों के अभाव के कारण प्रकृति की अपार देन होते हुए भी जितना सामाजिक दारिद्र्य भारत में है, उतना और कही भी नहीं है। 1848 में ब्रिटिष हाउस ऑफ कामन्स की समिति में यह प्रमाणित किया गया है कि, 'जब खानदेष में अनाज 6 से 8 षिलिंग तक फ्री क्वार्टर बिक रहा था, तब उसका भाव पूना में 64 से 70 षिलिंग तक फ्री क्वार्टर था। वहां लोग दुर्भिक्ष के कारण सड़कों पर मर रहे थे, और खानदेष से अनाज को लाना असम्भव था क्योंकि कच्ची सड़कें अगम्य थी।'

रेलों से कृषि को भी आसानी से सहायता पहुंचायी जा सकती है : जहां रेल–बांध बनाने के लिए मिट्टी खोदने की जरूरत हो वहां तालाब बनाये जा सकते है, और पानी रेल के किनारे–किनारे अलग–अलग स्थानों तक ले जाया जा सकता है। इस तरह सिंचाई को, जो पूर्वी देषों में खेती की अनिवार्य शर्त है अधिक विस्तृत किया जा सकता है और स्थानीय दुर्भिक्ष, जो पानी न मिलने से बार–बार होते हैं, रोके जा सकते हैं। इस विषय में रेलों का व्यापक महत्त्व और भी स्पष्ट जो जायेगा, जब हम देखेंगे कि घाटों के निकटवर्ती जिलों में भी सिंचाई वाली जमीनों से उन जमीनों की तुलना में, जहां सिंचाई नहीं है, तीन गुना अधिक कर प्राप्त होता है, इस या बारह गुना अधिक रोजगार निकलता है और बारह या पन्द्रह गुना अधिक मुनाफा होता है।[4]

कार्ल मार्क्स का मानना था कि अंग्रेजों ने अपने साम्राज्यवादी हितों की पूर्ति करने के जिन साधनों या जिस व्यवस्था का विकास किया है, वह एक न एक दिन उनके विरूद्ध प्रतिक्रिया का कारण जरूर बनेगी। रेलों से फौजी छावनियों की संख्या को और उनके खर्चे को कम करने का साधन प्राप्त हो जायेगा। फोर्ट सेंट–विलियम के टाउन–मेजर कर्नल वारेन ने हाउस कामन्स की विषेष समिति के सामने बयान दिया कि–'देष के दूरवर्ती इलाकों से सूचनाएं पहुंचने में आजकल जितने दिन या हफ्ते लग जाते हैं, भविष्य में उतने ही घण्टों में समाचार मिल सकने तथा निर्देष, सैनिक तथा सामान भी उतनी ही जल्दी भेज सकने की सम्भावना बहुमूल्य है। फौजों को दूर–दूर और अधिक स्वस्थ स्थानों पर रखा जा सकेगा, और इस तरह बहुत से आदमियों को, जो अब बीमारी के कारण मर जाते हैं, बचाया जा सकेगा। अलग–अलग गोदामों में इतनी अधिक रसद रखने की भी जरूरत न रहेगी और इस तरह जो नुकसान चीजों के सड–गल जाने या आबोहवा के कारण होता है, वह बन्द हो जायेगा। फौजें जिस अनुपात में अधिक कारगर हो जायेंगी उसी अनुपात में उनकी संख्या को भी कम किया जा सकेगा।'

हम जानते हैं कि ग्राम–समुदायों के स्वषासन–संगठन और आर्थिक आधार तोड़ दिये गये हैं। पर उनका सबसे निकृष्ट पहलू–समाज का अनेक असम्बद्ध, छोटी–छोटी, एक–सी इकाईयों में बिखरे रहना–आज भी, जब उनकी प्राणषक्ति नष्ट हो गयी है, कायम है। भारत में चूंकि गांवों का आपस में सम्बन्ध न था, इसलिए सड़कें न थीं, और चूंकि सड़कें न थीं, इसलिए यह अलगाव स्थायी हो गया। इन परिस्थितियों में एक ग्राम–समुदाय सुविधाओं के एक निष्चित निम्न–स्तर पर जीता था, दूसरे गांवों के साथ उसका सम्पर्क नहीं के बराबर होता था और उसमें उन इच्छाओं तथा प्रयासों का निपट अभाव था, जो सामाजिक उन्नति के लिए अनिवार्य होते हैं। अब, जब अंग्रेजों ने ग्राम–समुदायों की इस आत्मनिर्भर गतिहीनता को नष्ट कर दिया है, रेलें संचार तथा संसर्ग के अभाव की पूर्ति करेंगी। इसके अलावा– 'रेल–व्यवस्था का एक परिणाम यह भी होगा कि जो गांव रेलों के प्रभाव–क्षेत्र में आयेगा, वहां के लोगों को अन्य देषों के ऐसे आविष्कारों तथा मषीनों की भी जानकारी होगी और उन्हें प्राप्त करने के ऐसे साधन भी

समक्ष में आयेंगे जिनसे सबसे पहले भारत के पुष्तैनी और वृत्ति–भोगी ग्रामीण दस्तकारों की योग्यता परखी जायेगी और उसके बाद उनकी त्रुटियों को दूर करने का रास्ता मालूम होगा।' (चैपमैन, 'भारतीय कपास तथा व्यापार'।)[5] मार्क्स के अनुसार भारत औद्योगीकृत देश नहीं बन पाया है लेकिन औद्योगिक प्रगति की शुरूआत हो गई है। इसके संदर्भ में मार्क्स ने कहा है कि ''भले ही अंग्रेज पूँजीवादियों ने अपने मुनाफे के लिए रेलवे का विकास किया लेकिन इसके विकास से संबंधित गतिविधियों को वे नियंत्रित नहीं कर सकते थे। भारत के लोगों पर इसका प्रभाव पड़ा है और उन्होंने नई औद्योगिक कुशलता प्राप्त की है।[6] मार्क्स ने भारत के संबंध में अपने विचार जाहिर किए। उनका मानना था कि अंग्रेजों के द्वारा भारत में जिस पूँजीवादी व्यवस्था के बीज बोए जा रहे है वह एक दिन विद्रोह का कारण जरूर बनेगी। मार्क्स के अनुसार इंगलैंड ने हिन्दुस्तान में दो काम किए, एक विनाश का और दूसरा परिवर्तन का। उसने एशिया की पुरानी समाज व्यवस्था का नाश किया और पश्चिमी समाज व्यवस्था का भौतिक आधार खडा किया। अभी तक ज्यादातर विनाश का काम ही सामने आया था, फिर भी परिवर्तन का कार्य भी शुरू हो गया था।

अंग्रेज पहले विजेता थे जो विजितों से बड़े थे और जिन तक हिन्दुस्तानी सभ्यता की पहुँच न थी। उन्होंने ग्राम–समाज की जड़ें हिलाकर भारतीय उद्योग–धंधों को चौपट करके इस सभ्यता का नाश किया। भारतीय समाज में जो कुछ भी महान और गौरवपूर्ण था, उन्होंने उसे धूल में मिला दिया। हिन्दुस्तान में ब्रिटिश राज्य के इतिहास में इस ध्वंस के सिवा और बहुत कम बातें देखने को मिलती हैं। खडहरों के ढ़ेर में नई नीवें नहीं दिखाई देतीं। फिर भी नीवें डाली जा चुकीं हैं। (मार्क्स, हिन्दुस्तान में ब्रिटिश राज्य के भावी परिणाम, न्यूयार्क हेरल्ड ट्रिब्यून, 8 अगस्त 1853)।[7] मार्क्स यह मान रहे थे कि भारत अन्य देशों की तुलना में काफी अलग है। एक के बाद दूसरे देशों के शासकों ने यहाँ की संस्कृति में समाहित हो गए और एक अभिन्न अंग बन गए लेकिन अंग्रेज ऐसे नही हैं। अंग्रेजों ने अपनी संस्कृति व सभ्यता के वर्चस्व तले शेष भारत को कुचलकर अपनी सर्वोच्चता हासिल की। इसी वर्चस्व के सिद्धान्त से आगे आने वाले समय में ऐसे बदलाव होगें जो ब्रिटिश साम्राज्य के नींव हिला देगें।

मार्क्स को यह नीवें कहां दिखाई दीं ? उन्होंने ये चिहन बताए हैं–

1. मुगल साम्राज्य से भी ज्यादा राजनीतिक एकता कायम हुई है और पहले से उसका क्षेत्र भी बढ़ गया है, यह निश्चित है कि तार के खंभो से यह एकता और मजदूर होगी तथा टिकाऊ भी होगी।
2. हिन्दुस्तानियों की फौज (1857 के विद्रोह के पहले मार्क्स ने यह लिखा था। 1857 के बाद यह फौज तोड़ दी गई और जानबूझ कर अंग्रेजी फौजें बढ़ाई गईं। इनकी संख्या एक तिहाई हो गई और सब फौजों पर अंग्रेजों का जबर्दस्त नियंत्रण हो गया)।
3. एशिया के समाज में पहले–पहल एक स्वाधीन प्रेस (अखबार छापेखाने, प्रकाशन गृह आदि) कायम हुआ (मार्क्स ने यह बात 1835 की घोषणा के बाद लिखी थी, जिसमें हिन्दुस्तान में आजाद प्रेस कायम करने की बात कही गई थी। 1873 और उसके बाद प्रेस संबधी कई कानून बने और जैसे–जैसे साम्राज्यवादी हुकूमत के पाए हिलने लगे, वैसे–वैसे यह नियंत्रण भी बढ़ता गया)।
4. एशिया के समाज में जिस चीज का अभी तक अभाव था, वह व्यक्तिगत भू–सम्पत्ति की प्रथा चालू हुई।
5. अंग्रेजों ने चाहे जितने छोटे पैमाने पर और चाहे जितना भी मन मसोसकर क्यों न हो, एक शिक्षित वर्ग उत्पन्न किया, जो सरकारी काम संभालने की योग्यता रखता है और जिसने पश्चिमी विज्ञान को देखा भाला है।

6. जहाजों के जरिए यूरोप से लगातार और जल्दी–जल्दी आवाजाही शुरू हो गई है।

इन सबसे भी महत्वपूर्ण शोषणवादी पूंजीवादी शोषण का अनिवार्य परिणाम था। हिन्दुस्तान के बाजार को विकसित करने के लिए यह जरूरी था कि ''हिन्दुस्तान को एक उत्पादक देश का रूप दिया जाए'' अर्थात् यहां पर कच्चा माल मिले जिसे भेजकर तैयार माल मगाया जा सके। इसके लिए जरूरी था कि रेलों, सड़कों और नहरों का इंतजाम हो। जिस समय मार्क्स ने यह लिखा था, उस समय यह नया दौर शुरू ही हो रहा था। इस नए दौर से ही मार्क्स ने वह परिणाम निकाला था, जिसके बल पर हिन्दुस्तान के बारे में उन्होंने अपनी प्रसिद्ध भविष्यवाणी की थी।[8] उनका मानना था कि यदि आप एक बार विकास की प्रक्रिया शुरू कर दोगे तो बाद में उसे रोक पाना आसान नहीं होगा। उनके ही शब्दों में, मैं जानता हूँ कि अंग्रेज उद्योगपति केवल इसलिए भारत में रेलें बिछाना चाहते हैं कि वे रूई और अन्य कच्चा माल अपने कारखानों के लिए कम खर्च पर प्राप्त कर सकें। मगर जिस देष में लोहा और कोयला पाये जाते हों, उसके यातायात के साधनों में जब आप एक बार मषीनों को ले आयेंगे तो उसे खुद मषीनें बनाने से आप नहीं रोक सकेंगे। यह नहीं हो सकता कि आप एक विषाल देष में रेलों का जाल बिछाये रहें और उन औद्योगिक प्रक्रियाओं को वहां शुरू न होने दें, जिनके बिना रेलों की तात्कालिक जरूरतों को पूरा नहीं किया जा सकता और जिनके परिणामस्वरूप मषीनों का प्रयोग उन उद्योगों में भी शुरू जो जाएगा जिनका रेलों के साथ कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। इसलिए रेल–व्यवस्था भारत में आधुनिक उद्योग की जननी बनेगी।[9] मार्क्स यह बात अच्छी तरह से जान रहे थे कि भारत में रेलवे के द्वारा एक ऐसे युग का सूत्रपात होगा जिससे सामूहिकता के साथ राजनीतिक विकास की प्रक्रिया का अनवरत संचालन होगा। जो भविष्य में भारत को एकता के सूत्र में बाँधेगी।

वो आगे लिखते है, 'यह इसलिए और भी निष्चित है कि अंग्रेज अधिकारी स्वयं मानते हैं कि भारतीयों में अपने को बिल्कुल नए ढंग के काम के अनुकूल ढाल लेने और मषीनों को चलाने के लिए आवष्यक जानकारी हासिल कर लेने की विषेष योग्यता होती है। इसका अच्छा–खास सबूत इसी बात से मिल जाता है कि कलकत्ते की टकसाल में काम करने वाले भारतीय मैकेनिक, जो वहां बरसों से भाप की मषीनों पर काम कर रहे हैं, अपने काम में दक्ष और चतुर हैं। इसी तरह वे भारतीय भी हैं, जो हरिद्वार के कोयले के इलाकों में भाप के इंजनों पर काम कर रहे हैं। ऐसे ही अन्य कई उदाहरण दिये जा सकते हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के पूर्वाग्रहों से अत्यन्त प्रभावित होते हुए भी मिस्टर कैम्पबेल स्वयं यह मानने को मजबूर हैं कि 'भारत की अधिकांष जनता में महान औद्योगिक शक्ति है, पूंजी इकट्ठा करने की क्षमता है, गणित के लिए उसका मस्तिष्क विलक्षण रूप से साफ है और सांख्यिकी तथा तथ्य–विज्ञानों के लिए उसमें मेधा है।' कैम्पबेल आगे कहते हैं, 'उनकी बुद्धि अच्छी है।' रेल–व्यवस्था से उत्पन्न होकर आधुनिक उद्योग पुष्तैनी श्रम–विभाजन को खत्म कर देगा, जिस पर भारत की जात–पांत व्यवस्था खड़ी है और जो भारत की उन्नति तथा शक्ति के रास्ते में सबसे बड़ी रूकावट है।'[10] कार्ल मार्क्स ने भारतीय रेलवे के बारे में तत्कालीन स्थितियों के अनुसार अपने विचार व्यक्त किये।

निष्कर्ष– ब्रिटिषकालीन भारत में स्थापित रेलवे प्रणाली ने आरम्भिक कई वर्षों तक न सिर्फ घाटा उठाया बल्कि आम भारतीयों की पहुँच से भी दूर रही। 1900 के बाद रेलवे ने मुनाफा देना आरम्भ किया और स्थानीय लोग भी रेलवे का ज्यादा प्रयोग करने लगे। लोगों के साथ में यात्रा करने से सामाजिक विषमता की कड़ियाँ टूटीं, राजनीतिक चेतना बढ़ी और संस्कृति का आदान प्रदान हुआ। इसी विकसित चेतना नें रेलवे मजदूरों को संगठित किया और तत्कालीन समय में पहली व्यवस्थित व संयुक्त प्रणाली सिद्ध हुई। रेलवे स्थापना से ही इसका निर्माण भारतीय मजदूरों के द्वारा किया गया इसलिए आधुनिक भारत के मजदूर इतिहास की यह

अगुआ बनी। रेलवे ने न सिर्फ डाक–तार, संचार व्यवस्था को मजबूती दी बल्कि प्रथम विष्व युद्ध के समय इसनें उद्योगों के निर्माण में सहायता भी की। कांग्रेस के जन्म से लेकर स्वतंत्रता तथा बाद के प्रत्येक अधिवेषनों में रेलवे की अति महत्वपूर्ण भूमिका रही क्योंकि इसी यातायात के साधन के माध्यम से लोगों के द्वारा एक नवनिर्मित भारत की कल्पना की गई। कार्ल मार्क्स भविष्य के पथ प्रदर्षक थे, उनके द्वारा भारतीय रेलवे पर की गई टिप्पणी धीरे धीरे सत्य साबित हुई। हम भले ही ब्रिटिषकालीन भारत में रेलवे के विकास पर उनके विचारों का खण्डन करें लेकिन आजादी के बाद हमारे पास उनके मत के विरूद्ध कहने के लिए कुछ नहीं है। इसलिए उनकी भविष्यवाणी विलम्ब ही सही लेकिन सत्य ही प्रतीत होते दिख रही है।

संदर्भ –

1. पन्त, डॉ. जे. सी. एवं डॉ. एम. एल. सेठ, आर्थिक विचारों का इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2005, पृ. 224.
2. हुसैन, मुजतबा, समाजशास्त्रीय विचार, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2012, पृ. 75.
3. वॉकर, ऐंग्स, मार्क्स हिज थ्योरी एंड इट्स कनटेक्स्ट, लौगमैन ग्रुप लिमिटेड, न्यूयार्क, 1978, पृ. 145.
4. मार्क्स, कार्ल एवं फ्रेडरिक एंगेल्स, संकलित रचनाएं (चार भागों में), भाग–1, प्रगति प्रकाशन, मास्को, 2004, पृ. 268.
5. वही, पृ. 269.
6. सिंह, अभय प्रसाद, सं. भारत में उपनिवेशवाद, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2014, पृ. 14.
7. दत्त, रजनी पाम, आज का भारत, अनु. रामविलास शर्मा, ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2004, पृ. 105.
8. वही, पृ. 106.
9. जोशी, पी. सी. एंड के. दामोदरन, मार्क्स कम्स टू इंडिया, मनोहर बुक सर्विस, दिल्ली, 1975, पृ. 10.
10. मार्क्स, कार्ल एंड फ्रेडरिक एगेल्स, सेलेक्टेड वर्क्स इन टू वाल्यूम, वाल्यूम–1, फौरेन लैग्वेजेस पब्लिशिंग हाउस, मास्को, 1958, पृ. 356.